से पूर्व की मूर्तिकला का प्रमाण नहीं मानते। जो भी हो, शुंग काल से हमें बौद्ध धर्म के साथ-साथ जैन धर्म में भी मूर्ति पूजा के प्रमाण प्राप्त होने लगते हैं। लोहानीपुर (बिहार) से प्राप्त सर्वविहिन नग्न मूर्तियों का सम्बन्ध जैन तीर्थंकरों से बताया जाता है। खारवेल के हाथीगुम्फा अभिलेखानुसार जैनों में मौर्यकाल से पूर्व भी मूर्तिपूजा प्रचलित थी। कुछ जैन मूर्तियां मथुरा से अष्टमंगलों के साथ उपासना शिलापट पर प्राप्त हुई है इससे पता चलता है कि प्रथम शताब्दी ईस्वी तक जैनों के बीच मूर्ति पूजा की आम बात हो गयी थी जहां बौद्धों में हिनयान सम्प्रदाय बुद्ध को एकमात्र महापुरुष मानते हुए प्रतीक रूप में श्रद्धा व्यक्त करता है वही बौद्धों के महायान सम्प्रदाय में बुद्ध में ईश्वरत्व का आरोपण करते हुए मूर्तिपूजा की परंपरा प्रारंभ हो गयी। बौद्धों में बुद्ध की प्रारंभिक मूर्तियां महायान सम्प्रदाय से ही सम्बन्धित दिखती हैं। मथुरा व गांधार से बुद्ध के योग मुद्रा में बैठी व अभय मुद्रा में खड़ी मूर्तियों के प्रमाण मिलता है, जो सांची भरहुत, बोधगया आदि के स्तूपों या उसकी वेदिका पर

परिवेष्ठित प्रारंभिक उदाहरणों से भिन्न गुणात्मक रूप से भिन्न परिपक्व कला का विकास दिखता है

ईस्वी सन् की पहली सदी तक हम जिन कला केन्द्रों को महत्वपूर्ण होते देखते है वे निम्न है;

१. गांधार कला शैली

भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तर पश्चिम क्षेत्र में सिन्ध नदी के दोनो ओर स्थित क्षेत्र का सम्बन्ध गांधार कला से रहा है। गांधार कला के क्षेत्र में पेशावर की घाटी स्वात, बुनेर, बजौर तक के क्षेत्र सम्मिलित है। छठी व पाँचवी सदी ई० पू० में ईरान के हखमनी शासकों ने इस क्षेत्र पर शासन किया। बाद में यह क्षेत्र यूनानियों, मौर्यों, शकों पार्थियनों व कुषाणों के अधिकार में रहा। फलतः इस क्षेत्र में एक मिश्रित संस्कृति का जन्म हुआ। ईसा की पहली सदी में यह बौद्ध धर्म से जुड़े कला या शिल्प निर्माण के केन्द्र के रूप में उभरकर सामने आया। बौद्ध धर्म से जुड़ी इन कलाकृतियों पर यूनानी कला का स्पष्टतः प्रभाव दिखता है उदाहरणार्थ- बुद्ध की प्रतिमा में उत्कीर्ण वस्त्र यूनानी रोमन प्रभाव के अनुरूप झीने व पारदर्शी हो